भारत के पर्यावरण और वनों के संरक्षण के लिए मानचित्रण
Mapping for the Protection of India's Environment and Forests

शशाकं श्रीनिवासन
Shashank Srinivasan
December 5, 2011

"प्रौद्योगिकी मानव के इरादों को बुलंद करती है और क्षमता को कई गुना बढ़ा देती है." - डॉ. कैंटरो तोयामा

अपने पर्यावरण की देशीय प्रकृति का ज्ञान संसाधनों के उपयोग,पर्यावरण के प्रबंधन, भूमि संबंधी अधिकारों के आबंटन और अन्य समुदायों के साथ राजनयिक संबंधों के लिए आवश्यक है. भौगोलिक सूचनाओं को प्राप्त करना और उसका अभिलेखन समुदाय को चलाने के लिए एक आवश्यक तत्व है. इन सूचनाओं की प्रोसेसिंग और उनके आधार पर महत्वपूर्ण निर्णय लेना समुदाय के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है, भले ही वह कोई घुमंतू जनजाति हो या फिर भारत के आकार का कोई देश.

आज भारत संक्रमण के काल से गुज़र रहा है; ऐसी कई स्वतंत्र एजेंसियाँ हैं,जो अलग-अलग लक्ष्यों और उद्देश्यों को सामने रखकर देश के संसाधनों पर अपनी पकड़ मज़बूत करने में लगी हैं. पर्यावरण संबंधी विनियामक एजेंटों के बढ़ते काम के बोझ के कारण कार्यविधियों की बहुलता हो गई है और उसके फलस्वरूप आर्थिक विकास की दर कम हो गई है और सरकार की पारदर्शिता भी कम हो गई है. खास तौर पर भारत के पर्यावरण और वन के संरक्षण के लिए भारी मात्रा में भौगौलिक सूचनाओं को प्रोसेस करने और विभिन्न स्तरों पर प्रशासनिक अनुमोदनों की आवश्यकता होगी. निर्णय समर्थन प्रणाली को भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS) के साथ समन्वित करके भारत के पर्यावरण संबंधी विनियमन में सुधार लाया जा सकता है. भौगोलिक सूचनाओं के विश्लेषण के लिए विकसित भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS) नाम की यह सूचना प्रबंधन प्रणाली विभिन्न डेटासेटों को समन्वित करती है और उपयोगकर्ताओं को एक ऐसी क्षमता प्रदान करती है,जिसकी सहायता से विभिन्न मूल स्थानों के साथ देशीय डेटासेटों के आरपार की विशेषताओं को विश्लेषित किया जा सकता है.

परंपरागत रूप में भौगोलिक सूचनाओं का संकलन क्षेत्रों के सर्वेक्षक-दल द्वारा किया जाता था और उन्हें मानचित्र के भौतिक माध्यम में अभिलिखित किया जाता था. वृक्षों के आच्छादन और खेतीबाड़ी की ज़मीन और पहाड़ों व नदियों जैसे भौतिक लक्षणों से संबंधित भू-आच्छादन के डेटा को और सीमाओं और परिसीमाओं तक फैले हुए स्थलों के आभासी डेटा को भी भौगोलिक सूचना के रूप में जाना जाता है. पृथ्वी की सतह के बिंदुओं से संबंधित स्थलों के परिमापन संबंधी विज्ञान का सर्वेक्षण, मानचित्रण और इन सूचनाओं के साथ मानचित्र निर्मित करने के पूरक विज्ञान अध्ययन के प्राचीन क्षेत्र रहे हैं. सर्वेक्षक-दल भूमि के स्वामित्व की सीमाओं और भौतिक लक्षणों के परिमापन के काम में बरसों का समय लगा सकते हैं और उच्च रूप में प्रशिक्षित मानचित्रक विस्तृत मानचित्रों के रूप में समस्त समुदायों की भौगोलिक सूचनाओं को अभिलेखित करेंगे.

भौगोलिक सूचनाओं को एकत्र करने और उन्हें अभिलेखित करने की भारत में लंबी परंपरा रही है. सबसे पहले और सबसे बड़ा भूमि सर्वेक्षण छठी सदी में शेर शाह ने भूराजस्व के प्राक्कलन के लिए करवाया था. मुगल बादशाह औरंगज़ेब और ब्रिटिश साम्राज्य ने भी सत्रहवीं सदी के अंत में लिखित अभिलेखों और क्षेत्रीय मानचित्रों की प्रणाली का उपयोग करते हुए अपनी अर्जित भूमि पर अपना नियंत्रण बनाए रखने के लिए इस काम को जारी रखा था. सूचनाओं के संकलन और विश्लेषण के लिए प्रशिक्षित लोगों की आवश्यकता होती है ताकि इस डेटा को प्रोसेस करवाया जा सके और ज़्यादातर लोगों को इस विधि की जानकारी से दूर रखा जा सके. लेकिन पिछली सदी में सेटेलाइट-आधारित रिमोट सेंसिंग के आविष्कार के बाद इस स्थिति में काफ़ी बदलाव आ गया है. भौगोलिक सूचनाओं के संकलन के लिए यह अब अनिवार्य उपकरण बन गया है. रिमोट सेंसिंग सुदूर से ही निष्क्रिय और सक्रिय विद्युत् चुंबकीय विकिरण के द्वारा वस्तुओं के अध्ययन की विद्या है, जिसने सर्वेक्षण के तौर-तरीकों को स्वचालित कर दिया है और इस प्रकार

के डेटा को संकलित करने में लगने वाले समय को भी कम कर दिया है. अभिकलनात्मक (कंप्यूटेशनल) शक्ति में वृद्धि होने और उन्नत सॉफ़्टवेयर के विकास के कारण सरलता से लगाई जा सकने योग्य भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS) के निर्माण को भी सहज बना दिया है.

आज भारत में सरकारी और निजी क्षेत्र में अनेक एजेंसियाँ हैं, जो रिमोट सेंसिंग डेटा के विभिन्न अनुप्रयोगों पर काम कर रही हैं. इन अनुप्रयोगों में सबसे प्रमुख है, प्रबंधन और संरक्षण की दृष्टि से पर्यावरण का अध्ययन. भारतीय वन सर्वेक्षण के द्वारा देश के वन आवरण मानचित्रों का निर्माण किया जाता है और अन्य एजेंसियों द्वारा अपने हितों के संवर्धन के लिए मानचित्र बनाए या कमीशन किए जाते हैं.

भौगोलिक सूचनाएँ और पर्यावरणीय संरक्षण आपस में बुरी तरह से गुँथे हुए हैं. सीमाओं की पहचान और परिसीमन से उन क्षेत्रों या फिर सीमाओं पर पाबंदी लगाई जा सकती है या फिर उनमें प्रवेश मिल सकता है जिनसे पारिस्थितिक सीमाओं को या वन्य गतिविधियों को परिभाषित किया जा सकता है, जो पर्यावरणीय प्रबंधन के लिए बहुत आवश्यक हैं. मानवीय गतिविधियों के पर्यावरणीय प्रभाव के नियंत्रण के लिए यह सूचना बहुत आवश्यक है ताकि भारतीय पर्यावरण एवं वन (MoEF) और विभिन्न राज्य वन विभाग जैसी पर्यावरणीय विनियामक एजेंसियों को इसे सुलभ कराया जा सके. इन एजेंसियों द्वारा लिए गए निर्णयों से हर रोज़ लाखों भारतीयों के जीवन और आजीविका पर असर पड़ता है. यह डेटा विभिन्न स्रोतों ले प्राप्त किया जाता है और इन तमाम महत्वपूर्ण निर्णयों को लेने के लिए इनका उपयोग किया जाता है; परंतु डेटाबेस बिखरा हुआ है और उनके वर्तमान रूप में इसकी कल्पना भी मुश्किल है.भारत के उच्चतम न्यायालय ने हाल ही में दिए गए अपने निर्णय में भारत की पर्यावरणीय सूचनाओं के डिजिटीकरण की ज़ोरदार शब्दों में वकालत की है और इस प्रकार इसकी आवश्यकता को स्पष्ट रूप में स्वीकार किया है.

आदर्श रूप में पर्यावरणीय या वन संबंधी अनुमति के आवेदनों से प्राप्त देशीय डेटा की GIS में तेज़ी से प्रविष्टि की जाएगी; और फिर इसका मिलान वन आच्छादन, वन्य पर्यावास, भूजल और संरक्षित क्षेत्रों से दूरी जैसे डेटाबेस से किया जाएगा. चूँकि सभी आवेदनों का डेटा उसी GIS के अंदर निहित होगा, विशिष्ट क्षेत्र पर संचयी पर्यावरणीय प्रभाव का तेज़ी से अनुमान लगाया जा सकेगा. इस GIS का उपयोग भूदेशीय निर्णय समर्थन प्रणाली (GDSS) के रूप में किया जा सकेगा ताकि विनियामक एजेंसियाँ पारदर्शी, सटीक, पुनरुत्पादक और नीति संबंधी मज़बूत निर्णय लेने में उनकी मदद ले सकें.

इस GDSS के बिना सरकारी एजेंसियों की पहुँच उन सर्वोत्तम उपलब्ध उपकरणों तक नहीं हो सकती, जो देश के कानून को लागू करने के लिए आवश्यक हैं. उदाहरण के लिए गोआ राज्य की विधानसभा की लोक लेखा समिति ने अवैध खनन का पता लगाने के लिए हाल ही में गूगल अर्थ के उपलब्ध सैटेलाइट बिंबों का खुलकर उपयोग किया. एक दक्ष GIS की सहायता से संबंधित डेटाबेस का मात्र मिलान करके ही फ्लेग्रेंट उल्लंघनों को स्वतः ही फ़्लैग किया जा सकेगा;ऐसे बहुत से और भी मामले होंगे जो अब तक सामने नहीं आ पाए होंगे.

यूरोपीय आयोग के संयुक्त अनुसंधान केंद्र द्वारा अनुरक्षित भूमि के उपयोग की निगरानी / कवर डायनेमिक्स (MOLAND) वस्तुतः काम कर रहे GDSS का एक उदाहरण है. इस परियोजना का घोषित उद्देश्य “यूरोपियन संघ की नीतियों और विधायिका की तैयारी, परिभाषा और कार्यान्वयन के समर्थन के लिए शहरी और क्षेत्रीय पर्यावरणों के मूल्यांकन, निगरानी और मॉडलिंग व विकास” है और इसकी शुरुआत सन् 1998 में की गई थी. अमरीकी वन सेवा भी DGDSSs के विभिन्न प्रयोजनों के लिए इसका उपयोग करती है; 9 दिसंबर, 2011 की वनों से फ़ॉसेट्स तक की परियोजना के लिए यह सेवा अपने इस नवीनतम उपकरण का उपयोग “उन क्षेत्रों को चिह्नित करने के लिए करती है जो सतही पेय जल की आपूर्ति करते हैं और जिन पर विकास के कारण खतरे मँडरा रहे हैं”. इस GDSS से प्राप्त सूचना को उसके बाद वन कार्य योजनाओं में शामिल किया जा सकेगा या इसका उपयोग अन्य निर्णय संबंधी उपकरणों के लिए किया जा सकेगा.

इस GDSS का निर्माण एक तकनीकी और प्रौद्योगिकीय चुनौती होगी और इसका विकास गूगल या पैलेडिन जैसी निजी एजेंसियों द्वारा किया जा सकेगा. ये एजेंसियाँ इस प्रकार के उद्यम स्तर के सॉफ़्टवेयर के डिज़ाइन और उत्पादन की प्रामाणिक तौर पर विशेषज्ञ हैं. राष्ट्रीय सूचना केंद्र (NIC), राष्ट्रीय रिमोट सेंसिंग एजेंसी (NRSA) जैसी भारत सरकार की एजेंसियाँ और विभिन्न सरकारी अंतरिक्ष अनुप्रयोग केंद्र (SAC) भी इस प्रक्रिया में अग्रणी भूमिका निभा सकते हैं. वैकल्पिक उत्पादन प्रक्रिया ओपन-सोर्स सॉफ़्टवेयर के विकास के द्वारा ही हो सकती है; सितंबर, 2011 में आयोजित अमरीकी-रूसी सरकार का कोड-ए-थोन इस प्रक्रिया का एक उदाहरण है, जिसमें प्रोग्रामरों के दलों ने बेहतर शासन के लिए सूचना प्रणालियाँ निर्मित करने के लिए आपस में प्रतियागिता की थी.

व्यापक पर्यावरणीय GDSS निर्मित करने के लिए अपेक्षित प्रौद्योगिकियाँ विद्यमान हैं, इनके कार्यान्वयन से भारत में पर्यावरणीय विनियामक प्राधिकरणों की क्षमता बढ़ेगी और उनके इरादे बुलंद होंगे. आशा है इससे भारत के पर्यावरण और वनों का बेहतर ढंग से संरक्षण होगा.

शशांक श्रीनिवासन पर्यावरण के एक स्वतंत्र अनुसंधानकर्ता और मानचित्रकार हैं, जो भारत में फैले हुए गैर-सरकारी संगठनों के साथ मिलकर काम करते हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार <malhotravk@hotmail.com>